किया, उसका दर्शन उनके सभी परम्परागत भक्तों को हुआ। एक व्याख्याकार का कथन है कि जब श्रीकृष्ण सन्धि-प्रस्ताव लेकर दुर्योधन के पास गए थे, तो उसे भी विश्वरूप का दर्शन हुआ था। दुर्भाग्यवश, दुर्योधन ने शान्ति-प्रस्ताव को नहीं माना। इस पर श्रीकृष्ण ने अपने कतिपय विराट् रूप प्रकट किये। वे रूप अर्जुन को दिखाये इस रूप से भिन्न हैं। यहाँ स्पष्ट उल्लेख है कि इस रूप को पूर्व में किसी ने कभी नहीं देखा।

न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानै-
र्न च क्रियाभिर्न तपोभिरुग्रैः।
एवंरूपः शक्य अहं नृलोके
द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर।।४८।।

न=न; **वेद**=वैदिक स्वाध्याय; **यज्ञ**=यज्ञ (से); **अध्ययनैः**=अध्ययन से; **न दानैः**=न दान से; **न**=नहीं; **च**=तथा; **क्रियाभिः**=पुण्यकर्मों द्वारा; **न तपोभिः उग्रैः**=न उत्कट तपस्या से; **एवम्**=इस प्रकार; **रूपः**=विश्वरूप वाला; **शक्यः**=(देखा जा) सकता हूँ; **अहम्**=मैं; **नृलोके**=इस संसार में; **द्रष्टुम्**=देखा जाने को; **त्वत्**=तेरे (अतिरिक्त); **अन्येन**=अन्य द्वारा; **कुरुप्रवीर**=हे कुरुवीरों में श्रेष्ठ (अर्जुन)।

अनुवाद

हे कुरुश्रेष्ठ अर्जुन! तुझ से पहले किसी ने भी मेरे इस विश्वरूप का दर्शन नहीं किया है, क्योंकि न वेदों के स्वाध्याय से, न यज्ञों से, न दान से और न तपादि के द्वारा ही मेरा यह विश्वरूप देखा जा सकता है। केवल तूने इसका दर्शन किया है।।४८।।

तात्पर्य

इस सन्दर्भ में 'दिव्य दृष्टि' का तत्त्व ठीक-ठीक समझना आवश्यक है। जैसा कि 'दिव्य' (अर्थात् देवोचित) शब्द से अभिव्यक्त हो जाता है, देवोपम बन जाने से पूर्व दिव्य दृष्टि नहीं मिल सकती। वैदिक शास्त्रों के अनुसार, भगवान् विष्णु के भक्त देवता कहलाते हैं। जो श्रीविष्णु को नहीं मानते अथवा श्रीकृष्ण के निर्विशेष अंश को ही परात्पर समझते हैं, उन अनीश्वरवादियों को दिव्यदृष्टि नहीं मिल सकती। श्रीकृष्ण की निन्दा करना और दिव्यदृष्टि रखना—यह एक समय में नहीं हो सकता। देवत्व की प्राप्ति के बिना दिव्यदृष्टि अलभ्य रहती है। भाव यह है कि जिन्हें दिव्यदृष्टि प्राप्त है, वे भी अर्जुन की भाँति विश्वरूप का दर्शन कर सकते हैं।

भगवद्गीता में विश्वरूप का अभूतपूर्व वर्णन है। अर्जुन से पूर्व इसे कोई नहीं जानता था। अब इस घटना के बाद सभी को विश्वरूप का यत्किञ्चित् आभास हो गया है। जो वास्तव में दैवी गुणों से युक्त हैं, वे तो श्रीभगवान् के इस रूप का साक्षात्कार भी कर सकते हैं। परन्तु श्रीकृष्ण का शुद्धभक्त ही वास्तव में देवतुल्य हो सकता है। दैवी प्रकृति के आश्रित होकर दिव्यदृष्टि से युक्त हो जाने पर भी भक्त विश्वरूप के दर्शन को अधिक उत्सुक नहीं रहते। जैसा पूर्व श्लोक में कहा जा